शतपथ ब्राह्मण में नारी

भारतीय संस्कृति में नारी कर्म में क्रिया तथा धर्म में धुरी के रूप में अवस्थित है। नारी समाज का वह अभिन्न अङ्ग है जिसके बिना घर-परिवार, समाज- यहाँ तक कि सृष्टि की भी कल्पना सम्भव नहीं है।

वैदिक वाङ्मय में नारी के लिए प्रयुक्त विशेषणों[१] से भली-भाँति स्पष्ट होता है कि नारियाँ सुशिक्षिता, विदुषी थीं साथ ही तत्कालीन समाज में उन्हें बहुत अधिक सम्मान प्राप्त था। *बृहद्देवता* में प्राप्त ऋषिकाओं की सुदीर्घ सूची नारियों के वैदुष्य की सम्पुष्टि करती है-

घोषा गोधा विश्ववारा अपालोपनिषन्निषत्।
ब्रह्मजाया जहूर्नाम अगस्त्यस्य स्वसादितिः॥
इन्द्राणी चेन्द्रमाता च सरमा रोमशोर्वशी।
लोपामुद्रा च नद्यश्च यमी नारी च शश्वती॥
श्रीर्लाक्षा सार्पराज्ञी वाक् श्रद्धा मेधा च दक्षिणा।
रात्री सूर्या च सावित्री ब्रह्मवादिन्य ईरिताः॥[२]

---

१ **यशस्वती** -*ऋ.*, १.७९.१, **सञ्जया** -*ऋ.*, १०.१५९.३; **देवी** -*यजु.*, ४.२३, **इडा** -*यजु.*, ८.४३, **सुभगा**- *यजु.*, ८.४३; **सुमङ्गली**-*अथर्व.*, १४.२.२६

२ *बृहद्देवता*, २.८२-८४

परन्तु परवर्ती वाङ्मय में यह स्वरूप कुछ परिवर्तित दृष्टिगोचर होता है। तदनुसार प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य शुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनशाखीय शतपथ ब्राह्मण में विवेचित नारी की स्थिति का वर्णन किया जाना है।

शतपथ के यज्ञिय कर्मकाण्डों में आये हुए विविध प्रसङ्गों के माध्यम से तत्कालीन समाज में नारी की स्थिति का परिचय प्राप्त होता है जो निम्नलिखित बिन्दुओं में क्रमशः द्रष्टव्य है-

♦ **'नारी' के लिए प्रयुक्त पद-**

शतपथ ब्राह्मण में नारी के लिए मुख्यतः 'योषा' एवं 'जाया' इन दो पदों का प्रयोग बहुशः दृष्टिगत होता है-

(क) 'योषा'- शतपथ ब्राह्मण में प्रकृत शब्द का प्रयोग अनेक स्थानों पर प्राप्त होता है, जिससे तत्कालीन समाज में नारी के स्थान की सूचना प्राप्त होती है। √यु मिश्रणे से निष्पन्न 'योषा' पद नारी की पुरुष के साथ सायुज्यपरक स्थिति का सूचक है।[३]

- **योषा वै वेदिः**[४]- प्रस्तुत स्थल में बताया गया है कि जिस प्रकार वेदी का यज्ञ में महत्त्वपूर्ण स्थान है तथैव योषा का गृहस्थाश्रम में महत्त्वपूर्ण स्थान है। वेदी पर सम्पन्न यज्ञ का अपूर्व की उत्पत्ति से सम्बन्ध है, वहीं योषा की प्रजननयज्ञ से सम्बद्धता है।
- **योषा वै सरस्वती**[५]- प्रकृत सन्दर्भ में योषा की तुलना वाग्देवी सरस्वती से की गयी है अतः 'सरस्वती' पद के साथ इस प्रतीकात्मक प्रयोग द्वारा योषा का वैदुष्य परिलक्षित होता है।

---

३ *नि.*, ३.५.१

४ *श.ब्रा.*, १.२.५.१५, १.३.३.८, १.९.२.२

५ वही, २.५.१.११

- **योषा हि स्रुक्**[६]- चमससदृश यज्ञिय उपकरण 'स्रुक्' के रूप में प्रतीकात्मक स्थिति नारी के याज्ञिक अनुष्ठानों में प्रकृष्ट सहायक स्वरूप का द्योतक प्रतीत होती है।

(ख) 'जाया'- शतपथ ब्राह्मण में एक स्थल पर प्राप्त होता है कि पत्नी के बिना स्वर्ग-प्राप्ति सम्भव नहीं है। पति पत्नी को सम्बोधित करते हुए कहता है कि- हे पत्नी! आओ, स्वर्गारोहण करें-

जायएहि स्वो रोहाव।[७]

ऐतरेय ब्राह्मण में 'जाया' पद का प्रयोग दृष्टव्य है-

पतिर्जायां प्रविशति, गर्भो भूत्वा स मातरं तस्यां पुनर्नवो भूत्वा दशमे मासि जायते, तज्जाया जाया भवति यदस्यां जायते पुनः।[८]

ऐतरेय ब्राह्मण में जाया को पति का मित्र बताया गया है-

सखा ह जायाः।[९]

यही भाव तैत्तिरीय संहिता में भी प्राप्त होता है-

पत्नी हि सर्वस्य मित्रम्।[१०]

गोपथ ब्राह्मण में जाया पद का प्रयोग प्राप्त होता है-

आभिर्वा अहमिदं सर्वं जनयिष्यामि यदिदं किञ्चेति तस्माज्जाया अभवंस्तज्जायानां जायात्वं यच्चासु पुरुषो वायेत।[११]

---

६ *श.ब्रा.*, १.३.१.९, १.४.४.४

७ वही, ५.२.१.१०

८ *ऐ.ब्रा.*, ७.१३

९ वही, ३३.१

१० *तै.सं.*, ६.२.९.२

११ *गो.ब्रा.पू.*, १.१.२

मनुस्मृति में भी जाया की जननशक्ति के कारण उसे जनयित्री 'जाया' की संज्ञा दी गयी है-

पतिर्भार्यां संप्रविश्य गर्भो भूत्वेह जायते।

जायायास्तद्धि जायात्वं यदस्यां जायते पुनः॥[१२]

पति वीर्य रूप में स्त्री में प्रवेश करके गर्भ बनकर सन्तान रूप में संसार में उत्पन्न होता है, स्त्री का यही जायात्व (स्त्रीत्व) है जो इस स्त्री में सन्तानरूप से पति पुनः उत्पन्न होता है।

- **पारिवारिक सम्बन्धों में नारी के विविध रूप-**

मानव-जीवन के विभिन्न चरणों में नारी के विविध पारिवारिक सम्बन्धों में भिन्न-भिन्न रूप दृष्टिगत होते हैं-

(क) पुत्री- नारी के जीवन का प्रथम रूप पुत्रीरूप है। बृहदारण्यकोपनिषद् के वचनानुसार सन्तान के रूप में पुत्री की प्राप्ति उसके महत्त्व को स्पष्ट करती है-

अथ च इच्छेद्दुहिता मे पण्डिता जायेत सर्वमायुरियात्।[१३]

(ख) पत्नी- शतपथ ब्राह्मण में नारी की प्रतिष्ठा मुख्य रूप से गृहस्थाश्रम में उसके पत्नी रूप में दृष्टिगोचर होती है। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास- इन चारों आश्रमों में गृहस्थाश्रम को सबसे दायित्वपूर्ण माना गया है। मनुस्मृति में भी गृहस्थाश्रम के महत्त्व को स्वीकार किया गया है कि वेद तथा स्मृतियों में गृहस्थ सबसे अधिक दायित्वपूर्ण होने के कारण श्रेष्ठ है क्योंकि वह गृहस्थाश्रम तीनों का ही भरण-पोषण करता है अर्थात् उत्पत्ति और जीवनयापन की दृष्टि से ये तीनों आश्रम- गृहस्थाश्रम पर आश्रित हैं।

---

१२ *मनु.*, ९.८

१३ *बृह.उप.*, ६.४.१७

जैसा कि मनुस्मृति का वचन है कि जिस प्रकार बड़े- बड़े नद और नदियाँ सागर में जाकर स्थिर होते हैं तथैव समस्त आश्रमी गृहस्थ को प्राप्त करके ही स्थिर होते हैं-

सर्वेषामपि चैतेषां वेदस्मृतिविधानतः।
गृहस्थ उच्यते श्रेष्ठः स त्रीनेतान्बिभर्ति हि॥[१४]
यदा नदीनदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।
तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्॥[१५]

उसका कारण यह है कि ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और संन्यासी, इन तीनों आश्रमियों को नित्यप्रति अन्नवस्त्रादि दान करने से गृहस्थ धारण-पोषण करता है इसलिए व्यवहार में गृहस्थाश्रम सबसे बड़ा है अर्थात् ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ तथा संन्यास - इन तीनों आश्रमों को अन्नादि के दान द्वारा प्रतिदिन गृहस्थ ही धारण करता है, यही कारण है कि गृहस्थाश्रम समस्त आश्रमों में ज्येष्ठाश्रम है-

यस्मात्त्रयोऽप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम्।
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही॥[१६]

पत्नी के रूप में नारी गृहस्थ-जीवन की सम्पोषिका होती है। ब्राह्मण ग्रन्थ में अनेक सन्दर्भों में प्रजननार्थ नारी के उन्नत स्थान के विषय में सूचना प्राप्त होती है। प्रथम काण्ड में दर्शपौर्णमास याग के क्रम में वेदी भुजाओं को आहवनीय अग्नि के दोनों ओर आगे तक ले जाने का उल्लेख प्राप्त होता है, यहीं पर बताया गया है कि वेदी स्त्री है तथा अग्नि पुरुष है। इस प्रकार वेदी

---

१४ *मनु.*, ६.८९
१५ वही, ६.९०
१६ वही, ३.७८

की दोनों भुजाओं को अग्नि के दोनों ओर बढ़ाकर मानो वह स्त्री-पुरुष का सन्तानोत्पत्ति के लिए सम्पर्क करा देता है-

योषा वै वेदिर्वृषाग्निः परिगृह्य वै योषा वृषाणं शेते मिथुनमेवैतत्प्रजननं क्रियते तस्मादभितोऽग्निमसाऽउन्नयति।[१७]

दर्शपौर्णमास याग में एक अन्य सन्दर्भ में यह उल्लेख प्राप्त होता है कि यजमान-पत्नी आज्य को देखती है, यहाँ भी बताया गया है कि पत्नी स्त्री है और आज्य वीर्य है। इस प्रकार दोनों में सम्पर्क स्थापित करके सन्तति-प्रजनन होता है। इसलिए पत्नी आज्य को देखती है-

योषा वै पत्नी रेत आज्यं मिथुनमेवैतत्प्रजननं क्रियते तस्मादाज्यमवेक्षते।[१८]

शतपथ ब्राह्मण में योषा अर्थात् नारी की प्रतिष्ठा पत्नी के रूप में है तथा इस रूप में प्रजोत्पत्ति हेतु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान पर विराजमान है-

योषा वै पत्नी योषायै वाऽइमाः प्रजाः प्रजायन्ते।[१९]

गृहस्थाश्रम में गृहिणी के रूप में नारी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। शतपथ ब्राह्मण के यज्ञिय अनुष्ठानों में पति-पत्नी की सायुज्यपरक स्थिति को अनेक स्थलों पर देखा जा सकता है। पत्नी के रूप में वह पति की सहधर्मिणी, सहयोगिनीरूपा है जो यज्ञिय-विनियोगों में उसके साथ उपस्थित दिखाई देती है।

(ग) माता- मातृत्व का गौरव नारी की सबसे बड़ी सम्पदा है, उसके अन्य गुणों में मातृत्व अनन्य है। नारी के उत्कृष्ट रूप 'माता' के विषय में ब्राह्मण ग्रन्थ में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि मातृरूप में नारी अपनी सन्तान को

---

१७ *श.ब्रा.*, १.२.५.१५

१८ वही, १.३.१.१८

१९ वही, ३.८.२.५

कभी भी किसी भी प्रकार से हानि नहीं पहुँचाती है तथा न पुत्र अपनी माता को कभी हानि नहीं पहुँचाता है-

न हि माता पुत्रं हिनस्ति न पुत्रो मातरम्।[२०]

तैत्तिरीय उपनिषद् में भी माता को देव रूप में स्वीकार किया गया है -

मातृदेवो भव।[२१]

♦ **शतपथ ब्राह्मण में नारी की प्रतिष्ठा-**

ब्राह्मण ग्रन्थ के अनेक उद्धरणों से यह स्फुट निर्देश प्राप्त होता है कि तत्तकालीन समाज में स्त्रियों का स्थान अत्यन्त प्रतिष्ठित था-

- पत्नी के रूप में नारी को 'श्री' का स्वरूप बताया गया है तथा उसके प्रति हिंसा का सर्वथा निषेध किया गया है-

  स्त्री वाऽएषा यच्छ्रीर्न वै स्त्रियं घ्नन्ति।[२२]

  एक अन्य स्थल पर पुनः पत्नियों को 'श्री' का रूप कहा गया है-

  श्रियै वाऽएतद्रूपं यत्पत्न्यः।[२३]

  साथ ही यह भी स्पष्ट किया गया है कि नारी कभी किसी को हानि अथवा कष्ट नहीं पहुँचाती है-

  न वै योषा कंचन हिनस्ति।[२४]

- नारी को गृह की प्रतिष्ठा बताया गया है-

---

२० *श.ब्रा.*, ५.२.१.१८

२१ *तै.उप.*, १.११.२३

२२ वही, ११.४.३.२

२३ वही, १३.२.६.७

२४ वही, ६.३.१.३९

गृहा वै पत्न्यै प्रतिष्ठा।[२५]

- यज्ञात्मक अनुष्ठानों में नारी का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। शतपथ ब्राह्मण में पत्नी को यज्ञ का अर्धभाग बताया गया है-

जघनार्द्धो वा एष यज्ञस्य यत्पत्नी।[२६]

- शतपथ ब्राह्मण में राजा की चार पत्नियों का उल्लेख प्राप्त होता है– महिषी, वावाता, परिवृक्ता तथा पालागली-इन सभी की यज्ञिय क्रियाओं में सम्मिलित होना- नारी के यज्ञिय वातावरण में उपस्थिति की सूचना प्राप्त होती है-

चतस्रो जाया उपकॢप्ता भवन्ति। महिषी वावाता परिवृक्ता पालागली।[२७]

- ब्राह्मण ग्रन्थ के प्रथम काण्ड में प्राप्त सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि उस समय स्त्रियों का उपनयन किया जाता था तथा तदुपरान्त ही वे यज्ञ में प्रवेश कर सकती थीं-

जघनार्द्धो वाऽएष यज्ञस्य यत्पत्नी प्राञ्चे यज्ञस्तायमानो यादिति युनक्त्येवैनमितद्युक्ता मे यज्ञमन्वासाताऽइति। योक्त्रेण संनह्यति। योक्त्रेण हि योग्यं युञ्जन्त्यस्ति वै पत्न्या अमेध्यं यदवाचीनं नभिरथैतदाज्यमवेक्षिष्यमाणा भवन्ति तदेवास्या एतद्योक्त्रेणान्तर्दधात्यथ मेध्येनैवोत्तरार्धेनाज्यवेक्षते तस्मात्पत्नीं संनह्यति।[२८]

---

२५ *श.ब्रा.*, ३.३.१.१०

२६ वही, ५.२.१.८

२७ वही, १३.४.१.८

२८ वही, १.३.१.१२-१३

- ब्राह्मण ग्रन्थ में उल्लिखित है कि पत्नी पति का आधा भाग है तथा पुरुष जब तक पत्नी को प्राप्त करके सन्तानयुक्त नहीं होता, तब तक अपूर्ण ही रहता है-

  अर्द्धो ह वाऽएष आत्मनो यज्जाया तस्माद्यावज्जायां न विन्दते नैव तावत्प्रजायतेऽसर्वो हि भवति।[२९]

- शतपथ ब्राह्मण के यज्ञिय क्रिया-कलापों में पत्नी द्वारा अनेक यज्ञिय अनुष्ठानों के सम्पादन पत्नी की अनिवार्य उपस्थिति के परिचायकस्वरूप है।[३०]

- शतपथ ब्राह्मण के अनुसार यजमान की पत्नी अपने पति के साथ यज्ञ में भाग लेती है-

  पतिं वाऽनु जाया तदेवाऽस्यापि पत्नी।[३१]

  तैत्तिरीय ब्राह्मण में पत्नी के बिना यज्ञ करने वाले यजमान को 'अयज्ञिय' कहा गया है-

  अयज्ञियो वा एष योऽपत्नीकः।[३२]

♦ **अध्यात्मतत्त्व-ज्ञात्री-**

विश्व के इतिहास में भारतीय संस्कृति के अद्यावधि जीवित रहने का मुख्य कारण इसकी आध्यात्मिकता और त्याग है। आध्यात्मिकता वैदिक संस्कृति का मूल प्राण है।

---

२९ *श.ब्रा.*, ५.२.१.१०

३० वही, १.९.२.१, १.९.२.२१-२५

३१ वही, १.९.२.१४

३२ *तै. ब्रा.*, २.२.२.६

याज्ञवल्क्य ऋषि संसार से विरक्त होकर जब अरण्य में जाने लगे तो उन्होंने अपनी पत्नी मैत्रेयी को धन-सम्पदा देकर विदा चाही तो मैत्रेयी ने कहा-

येनाहं नामृतां स्यां तेनाहं किं कुर्याम्।[३३]

अर्थात् क्या मैं इस धन-दौलत से अमर हो जाऊँगी? जिससे मुझे अमरता ही प्राप्त न हो? उस वस्तु को लेकर मैं क्या करूँगीं? साथ ही मैत्रेयी कहती है क्या मैं धन से अमरत्व को प्राप्त कर सकती हूँ तो ऋषि कहते हैं-

अमृतत्वस्य तु नाऽशास्ति वित्तेन।[३४]

मैत्रेयी ने फिर पूछा कि कौन सी वस्तु है जिसकी प्राप्ति मनुष्य को स्वाधीन तथा स्वतन्त्र बना देती है, उस यथार्थ सत्य, शान्ति एवं आनन्द के विषय में मुझे बताइये? इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य ने कहा- 'आत्मतत्त्व को जानना एवं उसका साक्षात्कार करना चाहिए, यही मनुष्य-जन्म का अन्तिम लक्ष्य है।

अन्यत्र विदुषी गार्गी को भी याज्ञवल्क्य ने यही उपदेश दिया-

यो वै एतद् अक्षरं गार्गि अविदित्वा अस्मांल्लोकात् प्रैति स कृपणः। यो वै एतद् अक्षरं गार्गि! विदित्वा अस्मांल्लोकात् प्रैति स ब्राह्मणः।[३५]

अर्थात् हे गार्गी! जो इस अविनाशी तत्त्व को बिना जाने इस लोक से विदा हो जाता है, वह कृपण है। उसका जन्म निष्फल है और जो उस अमरतत्त्व आत्मा को जान लेने के पश्चात् इस लोक से विदा होता है, वह

---

३३ *श.ब्रा.*, १४.७.२.४

३४ वही, १४.७.२.४

३५ वही, १४.६.८.१०

ब्राह्मण है। **न हन्यते हन्यमाने शरीरे** [३६] के अनुसार आत्मा का नाश नहीं होता। यही भारतवर्ष की अमूल्य आध्यात्मिक निधि है, जिसका वर्णन कर्मकाण्ड की व्याख्या करने वाले शतपथ ब्राह्मण के चतुर्दश काण्ड में मैत्रेयी और गार्गी तथा याज्ञवल्क्य के संवादों के माध्यम से किया गया है।

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि शतपथ ब्राह्मण में आये हुए नारीविषयक उद्धरणों से सुस्पष्ट है कि पत्नी तथा माता के रूप में उसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। ब्राह्मण ग्रन्थ की यज्ञिय पृष्ठभूमि में वह पति की यज्ञकर्मसहयोगिनी के रूप में प्रतिष्ठित है। यज्ञ एवं पत्नी की एक साथ अनिवार्य स्थिति को पाणिनि मुनि ने भी स्वीकार किया है-

पत्युर्नो यज्ञसंयोगे। [३७]

♦ शतपथ ब्राह्मण में नारी विषयक कतिपय विचारणीय तथ्य-

शतपथ ब्राह्मण में जहाँ एक ओर नारी की यज्ञिय विनियोगों में उपस्थिति के दर्शन होते हैं, वहीं एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि वह एकाकी किसी भी यज्ञिय क्रिया-कलाप की संयोजिका एवं सम्पादयित्री के रूप में दिखाई नहीं देती है। ब्राह्मण ग्रन्थ के कतिपय निम्नलिखित उद्धरण नारी की तत्त्कालीन स्थिति के द्वितीय पक्ष को भी प्रकाशित करते हैं-

- ब्राह्मण ग्रन्थ के प्रथम काण्ड में प्राप्त होता है कि यजमान की जाया हविष्कृत का कार्य किया करती थी, परन्तु अब कोई अन्य दूसरा व्यक्ति उक्त कार्य को करता है-

  पुरा जायैव हविष्कृदुपोत्तिष्ठति ददिदमप्येतर्हि य एव कश्चोपतिष्ठति। [३८]

---

३६ *श्रीमद्.गी.*, २.२०

३७ *अष्टा.*, ४.१.३३

३८ *श.ब्रा.*, १.१.४.१३

- यद्यपि शतपथ ब्राह्मण में स्त्री की प्रतिष्ठा पुरुष के साथ यज्ञकर्म की सह-सम्पादिका के रूप में है तथापि एक स्थल पर स्त्री, शूद्र, काला कुत्ता- इनको अनृत कहा गया है तथा यज्ञ के समय इनके दर्शन का निषेध किया गया है-

  अशूद्रोच्छिष्टी। एष वै धर्मो य एष तपति सैषा श्रीः सत्यं ज्योतिरनृतं स्त्री शूद्रः श्वा कृष्णः शकुनिस्तानि न प्रेक्षेत नेच्छ्रियञ्च पाप्माञ्च नेज्ज्योतिश्च तमश्च नेत्सत्यानृते संसृजानीति।[३९]

- शतपथब्राह्मणकालीन समाज में सन्तानरूप में पुत्र की प्राप्ति पर विशेष बल दिया जाता होगा, ऐसा प्रतीत होता है यतः पुत्ररहिता पत्नी को 'निर्ऋति' कहा गया है जिसका तात्पर्य है- आपत्तिग्रस्त-

  अपुत्रा पत्नी सा निर्ऋतिगृहीता।[४०]

अतः उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि संहिताकाल में नारी का स्थान सुप्रतिष्ठित था, ब्राह्मणकालीन समाज में यद्यपि वह यज्ञों में पुरुष की कर्मसहयोगिनी के रूप में विद्यमान थी, तथापि उन यज्ञिय कर्मों की स्वतन्त्र संचालिका नहीं रह गयी। 'योषा' पद का अनेकशः प्रयोग सुव्यक्त करता है कि उसकी स्थिति पुरुष के सायुज्य के साथ स्वीकार की गयी है तथा 'जाया' इस पद का प्रयोग उसके प्रजननशील होने के कारण बताया गया है।

वस्तुतः स्त्री-पुरुष दोनों का सम्मिलित रूप ही विश्व है। दोनों के मध्य परस्पर अन्योन्याश्रितता है, अतः पति-पत्नी दोनों के मध्य किसी भी प्रकार का विभाग नहीं होता-

---

३९ *श.ब्रा.*, १४.१.१.३१

४० वही, ५.३.१.१३

जायापत्योर्न विभागो विद्यते।[४१]

उक्त विवेचन के आधार पर कह सकते हैं कि चतुर्विध वैदिक संहिताओं के पश्चात् ब्राह्मणग्रन्थों में नारी की स्थिति में परिवर्तन परिलक्षित होता है। संहिताकाल तक जहाँ वह स्वयमेव स्व कर्मप्रेरिका एवं सम्पादयित्री के रूप में प्रतिष्ठित है, वहीं ब्राह्मणकाल तक अधिकांश सन्दर्भों में वह पुरुष की यज्ञकर्मसहयोगिनीरूपा दिखाई देती है।

---

४१ *आ.ध.सू.*, २.६.१४.१६